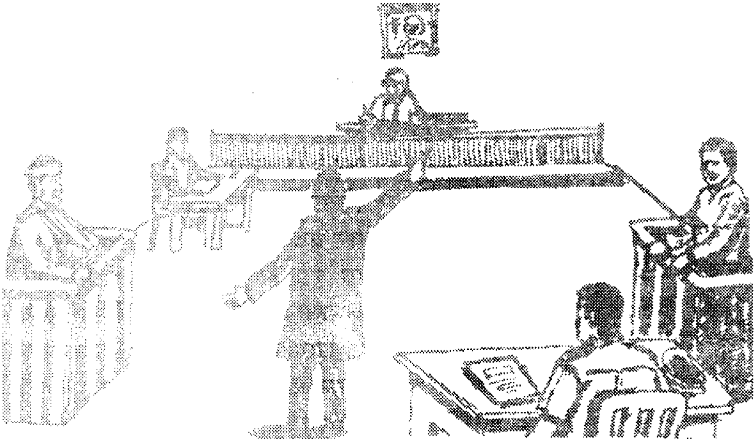

बच्चों का तुलनात्मक प्रदर्शन

पारंपरिक परीक्षा पद्धतियों में आमतौर पर बच्चों की रटने, याद रख पाने की क्षमता का ही मूल्यांकन होता है। इसलिए हम यह उम्मीद लगाकर बैठे थे कि पुस्तकों के अंशों को याद करने के मामले में शायद माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक कक्षाओं के बच्चों की स्थिति एक जैसी होगी। लेकिन हमारा यह अनुमान गलत निकला। हमने पाया कि माध्यमिक कक्षाओं के बच्चों की याद रखने की क्षमता उच्चतर माध्यमिक शालाओं के बच्चों की अपेक्षा बेहतर थी। लेकिन ये बच्चे याद की गई जानकारियों को काल्पनिक परिस्थितियों में लागू कर पाने में असमर्थ लग रहे थे। जबकि उच्चतर माध्यमिक कक्षाओं के बच्चे यह काम आसानी से कर पा रहे थे। यह बात और है कि वे भी अधिकांश अवधारणाओं को पाठ्य पुस्तक की जानकारियों के आधार पर समझाने में असफल हो रहे थे। उदाहरण के लिए इस श्रेणी के एक समूह ने हमें तत्कालीन राजनैतिक परिस्थितियों के उदाहरण देकर यह समझाने की कोशिश की कि राज्य में गठबंधन सरकार का गठन कैसे होता है? उन्होंने अपनी चर्चा आवश्यक सीटों के इर्द-गिर्द ही केंद्रित रखी। वे यह लगातार कह रहे थे कि बहुमत के लिए समर्थन ज़रूरी है। वे इस तथ्य से भी अवगत थे कि किसी गठबंधन या दल के पास जितना अधिक समर्थन होगा उसकी सरकार उतनी ही ठोस और स्थिर होगी। यह भी एक विडंबना थी कि बच्चों का यह समूह भी बहुमत की अवधारणा

को सटीक ढंग से समझा पाने में असमर्थ था।

ग्रामीण व शहरी बच्चों के बाहरी दुनिया से परिचय में भी काफी अन्तर था। बच्चों के साथ चर्चा के दौरान यह तथ्य काफी स्पष्ट रूप से उभरकर सामने आ रहा था। उदाहरण के लिए हमने 18 राजनैतिक दलों व 12 राजनैतिक नेताओं की सूची बच्चों को दी। बच्चों को राजनैतिक दलों व उनसे संबंधित नेताओं की सही जोड़ियां बनानी थीं। हमने पाया कि ग्रामीण क्षेत्र की माध्यमिक शालाओं के बच्चे राजनैतिक दलों व उनसे संबंधित नेताओं की सही जोड़ियां नहीं बना पाए। वे केवल राज्य के दो प्रमुख दलों से ही परिचित थे। इसके विपरीत शहरी क्षेत्र के दोनों श्रेणियों के बच्चों एवं ग्रामीण क्षेत्र के उच्चतर माध्यमिक कक्षाओं के बच्चों ने ये जोड़ियां काफी सटीक ढंग से बना दी। ग्रामीण क्षेत्र के दोनों श्रेणियों के बच्चे अपने ज़िले के सभी चुनाव क्षेत्रों व चुनाव क्षेत्रों से जीतने वाले विधायकों के नामों को जानते थे। इसके विपरीत शहरी क्षेत्रों के बच्चे इंदौर, उज्जैन व भोपाल जैसे नगरीय केंद्रों को चुनाव क्षेत्रों के रूप में तो पहचान रहे थे लेकिन अपने ज़िले के सभी छः निर्वाचन क्षेत्रों के नाम उन्हें मालूम नहीं थे। इन्हें यह भी पता नहीं था कि देवास ज़िले से छः विधायक कौन-कौन से हैं? शहरी क्षेत्र के दोनों समूहों के बच्चे तहसीलदार, पटवारी, आदि प्रशासनिक पदों के विषय में भी नहीं जानते थे।

बाहरी दुनिया से परिचय से जुड़े हुए ऊपर बताए गए तथ्यों से एक बहुत रोचक बात उभरती है। ग्रामीण क्षेत्रों के माध्यमिक कक्षाओं के बच्चे नवमीं-दसवीं तक आते-आते शहरी बच्चों के समान ही राजनैतिक दलों को पहचानने लगते हैं। वास्तव में यह एक ग्रामीण समूह ही था जिसने सबसे ज़्यादा राजनैतिक दलों के विषय में जानकारी दी।

सभी चर्चाओं के व्यापक अवलोकन से ऐसा लगता है कि शहरी क्षेत्र के काफी बच्चे नवमीं-दसवीं कक्षाओं तक आते-आते राजनीति के विषय में निर्विकार हो जाते हैं। दूसरी तरफ इन कक्षाओं में पहुंचने पर ग्रामीण क्षेत्र के बच्चे राजनीति से जुड़े मुद्दों में काफी रुचि लेने लगते हैं। यह तथ्य ग्रामीण क्षेत्र के उच्चतर माध्यमिक कक्षाओं के बच्चों द्वारा राजनीति के विषय में पूछे जाने वाले प्रश्नों के उत्तर देने के प्रति उत्साह व विभिन्न राजनैतिक विषयों को समझाने के प्रयासों से विशिष्ट रूप से उभरता है।

निष्कर्ष

पाठ्यचर्या से जुड़े तमाम दस्तावेज़ों में कुछ राजनैतिक अवधारणाओं को पवित्रता का दर्जा दे दिया गया है; जो

कि पाठ्य पुस्तकों में बहुत स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। नागरिक शास्त्र की पाठ्य पुस्तकें बहुत ही संक्षिप्त व संविधान केंद्रित हैं। पुस्तकों को कानूनी दृष्टिकोण के साथ कानून के ही ढांचे में पेश करने की कोशिश की गई है, जिसकी वजह से पुस्तकों में तथ्यों की भरमार है।

यूं तो दावा किया जाता है कि ये पुस्तकें नागरिकता शिक्षण को प्रोत्साहन देने की एक कोशिश है लेकिन इन पुस्तकों में नागरिकता की मूल आत्मा 'लोकतंत्र' से जुड़े हुए बहुत-से प्रमुख बिन्दुओं को शामिल नहीं किया गया है। इन बिन्दुओं में लोकतंत्र का विचार, प्रशासन व कानून बनाने की आवश्यकता, प्रतिनिधित्व का अर्थ और प्रतिनिधि व्यवस्था में व्यक्ति की भूमिका, पदानुक्रम आधारित ढांचे के विचार आदि को गिनाया जा सकता है। पाठ्य पुस्तकों में शामिल विभिन्न अवधारणाओं में आपसी अंतर-संबंधों के लिए कोई स्थान नहीं है। यही कारण है कि बच्चे विभिन्न अवधारणाओं के बीच अंतर-संबंध स्थापित कर पाने में पूरी तरह असफल रहते हैं।

नागरिक शास्त्र में सीखने-सिखाने की प्रक्रिया तभी सार्थक हो सकती है जब पाठ्य पुस्तकों में समाज से प्राप्त ज्ञान को भी शामिल किया जाए। बच्चों को अपने अनुभवों को बांटने के सम्मानजनक ढंग से अवसर दिए जाएं।

भले ही हम नागरिक शास्त्र के शिक्षण का उद्देश्य नागरिकता शिक्षण को मानें या नागरिक शास्त्र को केवल राजनैतिक अवधारणाओं से जोड़ें; यह ज़रूरी है कि नागरिक शास्त्र पढ़ाने के तरीकों को ऐसे ढांचे में बांधकर पेश करने की आवश्यकता है जिससे राजनैतिक संस्थाओं, ढांचों, प्रक्रियाओं व विचारों आदि को लोगों के परिवेश व जीवन की सच्चाइयों के साथ जोड़कर देखा जा सके। नागरिक शास्त्र के शिक्षण का ढांचा संस्थाओं के आदर्श स्वरूप को मात्र याद रखने की क्षमता बढ़ाने वाला नहीं होना चाहिए बल्कि उसमें इन संस्थाओं के कामों के विषय में बच्चों को सोचने व विश्लेषण करने की क्षमता विकसित करने के लिए भी उपयुक्त जगह दी जानी चाहिए। कुछ आलोचकों का मानना है कि वर्तमान पाठ्य पुस्तकें उपनिवेशवादी मानसिकता, पुरुष प्रधानता के विचार एवं शहरी व मध्यमवर्गीय लोगों के दृष्टिकोण से लिखी गई हैं। इन पुस्तकों में गरीबों, पिछड़े वर्गों, आदिवासियों, दलितों व सबसे अधिक महिलाओं के विषय में पूर्वाग्रह बहुत गहराई तक मौजूद हैं।

इस विषय में अध्ययनकर्ता एलेक्स एम. जॉर्ज यह मानते हैं कि नागरिकता का मूल आशय आमतौर पर मध्यम-वर्गीय मूल्यों पर आधारित होता है। मध्यमवर्गीय मूल्य एक खास तरह की

संस्कृति को प्रोत्साहित करते हैं। नागरिकता का यह अर्थ ही दरअसल पूर्वाग्रहों से ग्रसित है।

इस विषय की एक व्याख्या यह भी की जाती है कि नागरिकता शिक्षण इसलिए असफल रही है क्योंकि इसमें राजनीति जुड़ जाती है। इस संदर्भ में हमने अध्ययन के कार्यक्षेत्र के शहरी व ग्रामीण पृष्ठभूमियों के शिक्षकों से बातचीत की। हमें लगा कि शहरी क्षेत्र के शिक्षक आजकल की राजनैतिक गतिविधियों व राजनैतिक संस्थाओं के काम के तरीकों को असभ्य मानते हैं। 'ये संस्थाएं असभ्य कैसे हो रही हैं?' इसे समझाने के लिए शिक्षकों ने सन् 1998 के आसपास उत्तर प्रदेश विधान सभा में होने वाले हंगामों व मारपीट के उदाहरण दिए। इन शिक्षकों का यह भी मानना था कि लालू यादव और जयललिता जैसे नेताओं द्वारा किए जाने वाले भ्रष्टाचार की वजह से भी राजनीति असभ्यता की तरफ बढ़ रही है।

शहरी शिक्षकों की तरह ग्रामीण क्षेत्र के शिक्षकों ने भी राजनीति के असभ्य होते हुए चरित्र पर कुछ टिप्पणियां की। उनके अनुसार ग्राम पंचायतों में निरक्षर महिलाओं व दलित पंचों के आने से इन पंचायतों के काम करने की क्षमता प्रभावित हुई है। शिक्षकों ने अपने आसपास की ग्राम पंचायतों के उदाहरण देते हुए बताया कि कई ग्राम पंचायतों में दलितों, आदिवासियों व महिलाओं को पंचों या सरपंचों के पदों पर बिठा तो दिया गया है लेकिन इनमें से अधिकांश लोग गांवों के कुछ संपन्न लोगों के मोहरों के रूप में काम करते हैं। ऐसा करने से इन संस्थाओं के काम के स्तर में गिरावट आई है।

इस संदर्भ में यह तथ्य ध्यान में रखने की ज़रूरत है कि पाठ्य पुस्तकें विभिन्न राजनैतिक संस्थाओं व ढांचों को आदर्श रूप में पेश करने की कोशिश करती हैं। पाठ्य पुस्तकें यह बताने की कोशिश करती हैं कि राजनैतिक संस्थाओं व ढांचों को किस तरह का होना चाहिए। ये संस्थाएं व ढांचें ज़मीन पर किस तरह का काम कर रहे हैं इससे इन्हें कोई लेना-देना नहीं होता।

एक महत्वपूर्ण बात यह भी है कि वर्तमान पाठ्य पुस्तकों को जिस ढंग से लिखा गया है वह शिक्षकों को भी सुविधाजनक लगता है। शिक्षक भी असली घटनाओं पर चर्चा से बचना चाहते हैं। इस तथ्य की पुष्टि के लिए पुनः यह याद दिलाना आवश्यक लगता है कि अधिकांश शिक्षक राजनीति की वास्तविक घटनाओं को असभ्य मानते हैं। शिक्षकों का यथास्थितिवादी रवैया वास्तव में समाज के संपन्न तबकों के हितों की पूर्ति करता है, क्योंकि उनका वर्चस्व ज्यों-का-त्यों बना रहता है। शिक्षक यथास्थितिवादी क्यों बने रहना

चाहते हैं, यह अपने आप में एक स्वतंत्र अध्ययन का विषय हो सकता है?

यदि हम इन संस्थाओं व ढांचों के दैनिक कार्यों का आकलन करें तो हम पाएंगे कि इन संस्थाओं की वास्तविक कार्यप्रणाली शोषण और शक्ति के सबंधों पर आधारित है, जिसे राजनीति कह दिया जाता है।

इस तरह यदि नागरिक शास्त्र के विषय के पठन-पाठन में बच्चों और शिक्षकों के अनुभवों को शामिल किया जाए तो वह केवल नागरिक शास्त्र ही नहीं रहेगा बल्कि एक ऐसा व्यापक विषय बनेगा जिसमें सभ्यता के कफन में दुनिया की सच्चाइयों को ज़िंदा नहीं जलाया जा सकेगा।

एलेक्स एम. जॉर्ज: एकलव्य के सामाजिक अध्ययन कार्यक्रम से संबद्ध रहे हैं। फिलहाल वे स्पेन के एक संस्थान के अंतर्गत सोशियोलॉजी ऑफ लॉ का अध्ययन कर रहे हैं।

मूल लेख अंग्रेज़ी में। अनुवाद एवं प्रस्तुति: राम मूर्ति शर्मा: एकलव्य के सामाजिक अध्ययन कार्यक्रम से जुड़े हैं।

इस लेख के सभी चित्र एकलव्य की 'सामाजिक अध्ययन' कक्षा सातवीं पुस्तक से लिए गए हैं।

क्या अंडा सांस लेता है?

अंडे का किस्सा अभी जारी है. . . . .

संदर्भ के अंक-19 में के. आर. शर्मा के लेख 'क्या अंडा सांस लेता है?' में पृष्ठ-11 पर लिखा था, ".... एलब्युमिन एक तरह का प्रोटीन है जो अंडे में पल रहे भ्रूण का पोषण नहीं करता, बल्कि उसको सुरक्षा प्रदान करता है।"

एक साथी ने सवाल उठा दिया कि प्रोटीनयुक्त एलब्युमिन केवल योक यानी भ्रूण को झटकों से बचाने का काम करे – यह बात कुछ हजम नहीं होती। इसलिए हमने खोजबीन शुरू की, जिससे समझ में आया कि एलब्युमिन में लगभग 87 प्रतिशत पानी होता है, 10-11 प्रतिशत में तरह-तरह के प्रोटीन और शेष 2-3 प्रतिशत में विभिन्न खनिज, वसा व कार्बोहाइड्रेट। हमारे द्वारा देखे गए विभिन्न स्रोत इन बातों पर सहमत थे कि एलब्युमिन सुरक्षा के अलावा –

1. भ्रूण को आर्द्रता यानी नमी प्रदान करता है।
2. इसमें मौजूद प्रोटीन मुर्गी के भ्रूणीय विकास में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं; खासतौर पर भ्रूण का पृष्ठीय व उदर भाग का अक्ष तय करने में।

एलब्युमिन में मौजूद प्रोटीन का इस्तेमाल भ्रूण के पोषण के रूप में होता है ऐसा स्पष्ट उल्लेख हमें कहीं नहीं मिला। कई लेखक ऐसा इंगित करते हुए प्रतीत हुए परन्तु उनमें भी स्पष्ट मत व्यक्त करने में झिझक दिखाई दी। इसलिए खोजबीन का यह हिस्सा अभी अधूरा है जिसमें आप भी मदद कर सकते हैं।

– संपादक मंडल